रजिस्ट्री सं० डी० एल०-33004/97 REGD. NO. D. L.-33004/97

भारत का राजपत्र
The Gazette of India

असाधारण
EXTRAORDINARY

भाग II—खण्ड 3—उप-खण्ड (ii)
PART II—Section 3—Sub-section (ii)

प्राधिकार से प्रकाशित
PUBLISHED BY AUTHORITY

सं. 18] नई दिल्ली, शुक्रवार, जनवरी 9, 1998/पौष 19, 1919
No. 18] NEW DELHI, FRIDAY, JANUARY 9, 1998/PAUSA 19, 1919

विधि और न्याय मंत्रालय

(विधायी विभाग)

अधिसूचना

नई दिल्ली, 9 जनवरी, 1998

का.आ. 31(अ).—राष्ट्रपति द्वारा किया गया निम्नलिखित आदेश सर्वसाधारण की जानकारी के लिए प्रकाशित किया जाता है :—

आदेश

दिसम्बर, 1987 में हुए उप-निर्वाचन में 38-विले पार्ले, महाराष्ट्र विधान सभा निर्वाचन क्षेत्र से डा. रमेश यशवंत प्रभु (जिन्हें इसमें इसके पश्चात् "निर्वाचित अभ्यर्थी" कहा गया है) का निर्वाचन, निर्वाचित अभ्यर्थी द्वारा लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 (जिसे इसमें इसके पश्चात् "उक्त अधिनियम" कहा गया है) की धारा 123 के खंड (3) और खंड (3क) में विनिर्दिष्ट भ्रष्ट आचरण, निर्वाचित अभ्यर्थी द्वारा किए जाने के आधार पर, मुंबई उच्च न्यायालय द्वारा 7-4-1989 को अपास्त कर दिया गया था;

और निर्वाचित अभ्यर्थी द्वारा उच्चतम न्यायालय के समक्ष अपील फाइल की गई थी और उस न्यायालय ने तारीख 18-5-1989 के अंतरिम आदेश द्वारा, तारीख 7-4-1989 के मुंबई उच्च न्यायालय के आदेश पर रोक लगा दी थी ;

और उच्चतम न्यायालय ने तारीख 11 दिसम्बर, 1995 को अपील खारिज कर दी ;

और उक्त अधिनियम की धारा 8क की उपधारा (3) के अनुसरण में, इस प्रश्न पर कि क्या निर्वाचित अभ्यर्थी को, उस धारा की उपधारा (1) के अधीन निरर्हित किया जाए और यदि किया जाए तो कितनी अवधि के लिए, निर्वाचन आयोग की राय मांगी गई थी;

और निर्वाचन आयोग ने अपनी यह राय दी है (उपाबंध देखिए) कि निर्वाचित अभ्यर्थी ऊपर उल्लिखित भ्रष्ट आचरण किए जाने के संबंध में छह वर्ष की अवधि के लिए, जिसकी संगणना तारीख 11 दिसम्बर, 1995 अर्थात् उच्चतम न्यायालय के आदेश की तारीख से की जाएगी, निरर्हित किया जाए ;

अत: अब, मैं, के. आर. नारायणन्, भारत का राष्ट्रपति, उक्त अधिनियम की धारा 8क की उपधारा (3) के अधीन, मुझे प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए, यह विनिश्चय करता हूँ कि निर्वाचित अभ्यर्थी को तारीख 11 दिसम्बर, 1995 से छह वर्ष की अवधि के लिए निरर्हित किया जाए।

8 जनवरी, 1998 भारत का राष्ट्रपति

भारत निर्वाचन आयोग

गणपूर्ति :

माननीय श्री जी·वी·जी· कृष्णामूर्ति	माननीय श्री जे·एम· लिंगदोह
निर्वाचन आयुक्त	निर्वाचन आयुक्त

1997 का निर्देश मामला सं० 1 [लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम]

[लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 की धारा 8क के अधीन भारत के राष्ट्रपति से प्राप्त निर्देश]

संदर्भ : डा० रमेश यशवंत प्रभु, महाराष्ट्र विधान सभा के भूतपूर्व विधान सभा सदस्य, की निरर्हता

राय

लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 [जिसे इसमें इसके पश्चात् "1951 का अधिनियम" कहा गया है] की धारा 8क की उपधारा [3] के अधीन भारत के राष्ट्रपति से प्राप्त इस निर्देश में, इस प्रश्न पर कि क्या डा० रमेश यशवंत प्रभु, महाराष्ट्र विधान सभा के भूतपूर्व सदस्य को उक्त अधिनियम की धारा 8क[1] के अधीन निरर्हित किया जाए

....2/-

और यदि किया जाए तो कितनी अवधि के लिए, निर्वाचन आयोग की राय मांगी गई है ।

2. संक्षेप में, सुसंगत तथ्य निम्नलिखित हैं :-

(i) डा. रमेश यशवंत प्रभु, दिसंबर, 1987 में हुए उपनिर्वाचन में 38-विले पार्ले विधान सभा निर्वाचन क्षेत्र से महाराष्ट्र विधान सभा के लिए निर्वाचित हुए थे । उनके निर्वाचन को एक प्रतिद्वंदी अभ्यर्थी, श्री प्रभाकर काशीनाथ कुंटे द्वारा, 1988 की निर्वाचन अर्जी सं. 1 में, मुंबई उच्च न्यायालय के समक्ष प्रश्नगत किया गया था ।

(ii) मुंबई उच्च न्यायालय ने अपने तारीख 7.4.1989 के निर्णय और आदेश द्वारा, डा० रमेश यशवंत प्रभु का निर्वाचन 1951 के अधिनियम की धारा 123(3) और 123(3क) के अधीन भ्रष्ट आचरण किए जाने के आधार पर शून्य घोषित किया था । न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया था कि श्री प्रभु ने -

(क) अपने धर्म के आधार पर अपने पक्ष में मत डालने के लिए मतदाताओं से, अपने अभिकर्ताओं और अपनी सम्मति से अपील करने ;

(ख) भारत के नागरिकों के विभिन्न वर्गों के बीच, धर्म और समुदाय के आधार पर शत्रुता और घृणा की भावनाओं का संवर्धन करने या संवर्धन करने का प्रयत्न करने,

(iii) श्री प्रभु ने, उनका निर्वाचन शून्य घोषित करने वाले मुंबई उच्च न्यायालय के पूर्वोक्त आदेश के विरुद्ध भारत के उच्चतम न्यायालय के समक्ष अपील (1997 की सिविल अपील सं॰2836) फाइल की थी । भारत के उच्चतम न्यायालय ने अपने तारीख 18·5·1989 के आदेश द्वारा, उच्च न्यायालय के निर्णय का प्रवर्तन और 1951 के अधिनियम की धारा 8क के अधीन और कार्यवाहियां भी रोक दी थी ।

(ii) उच्चतम न्यायालय ने अपने तारीख 11 दिसंबर, 1995 के अंतिम आदेश द्वारा श्री प्रभु की अपील खारिज कर दी है और श्री प्रभु के निर्वाचन को शून्य घोषित करने वाले मुंबई उच्च न्यायालय के विनिश्चय को बनाए रखा है । उच्चतम न्यायालय, उच्च न्यायालय के इस निष्कर्ष से सहमत हो गया है कि 1951 के अधिनियम की धारा 123(3) और 123(3क) के अधीन, धर्म के आधार पर मतदाताओं से अपील करने और धर्म के आधार पर मतदाताओं के विभिन्न वर्गों के बीच शत्रुता और घृणा के संवर्धन करने के भ्रष्ट आचरण का आरोप साबित हो गया है ।

(i) इस प्रकार, उच्चतम न्यायालय के तारीख 11·12·1995 के उक्त निर्णय द्वारा श्री प्रभु, 1951 के अधिनियम की धारा 123(3) और धारा 123(क) के अधीन भ्रष्ट आचरण के दोषी पाए गए हैं । सचिव, महाराष्ट्र विधान सभा द्वारा, 1951 के अधिनियम की धारा 8क(1) के अनुसार, श्री प्रभु

का मामला राष्ट्रपति को निर्दिष्ट किए जाने पर, यह विषय, उक्त अधिनियम की धारा 8क(3) के अधीन निर्वाचन आयोग को उसकी राय के लिए 14-1-1997 को निर्दिष्ट किया गया है ।

3. आयोग ने अपनी राय बनाने और देने के पूर्व, डा. रमेश यशवंत प्रभु को व्यक्तिगत सुनवाई का अवसर देने का विनिश्चय किया । डा. प्रभु, बाई पास आपरेशन के कारण आयोग द्वारा नियत की गई तारीख 4.4.1997 को सुनवाई के लिए हाजिर नहीं हो सके किन्तु उन्होंने तारीख 15 मार्च, 1997 को अपना लिखित कथन फाइल किया । एक अनुपूरक लिखित कथन भी श्री प्रभु द्वारा, उनके अधिवक्ता श्री ए.बी. भंडारी की मार्फत् 20.5.1997 को फाइल किया गया था । पूर्वोक्त अनुपूरक लिखित कथन के प्राप्त होने पर, आयोग ने डा० प्रभु को सुने जाने का एक और अवसर देने का विनिश्चय किया । तदनुसार उन्हें संदेश और तारीख 24.5.1997 की औपचारिक सूचना द्वारा या तो व्यक्तिगत रूप से या अपने प्राधिकृत काउंसेल के माध्यम से तारीख 21.7.1997 को हाजिर होने का और इस विषय में अपना निवेदन करने का निदेश दिया गया था । तारीख 24.6.97 की उक्त सूचना में आयोग ने विनिर्दिष्ट रूप से डा० प्रभु और उनके अधिवक्ता को यह स्पष्ट कर दिया था कि 31.7.1997 को हाजिर होने में व्यतिक्रम होने पर यह विषय उन्हें कोई और निर्देश किए बिना विनिश्चित किया जाएगा । इस तथ्य के बावजूद कि आयोग की ओर उल्लिखित सूचना, आयोग में वापस प्राप्त स्वीकृति के अनुसार, उनके द्वारा सम्यक् रूप से प्राप्त कर ली गई थी, उनमें

से कोई भी 31·7·1997 के उक्त सुनवाई पर हाजिर नहीं हुआ । तथापि, तारीख 29·7·1997 को आयोग ने श्री प्रभु से, उनके द्वारा भारत के राष्ट्रपति के सचिव को संबोधित पत्र की एक प्रति प्राप्त की थी जिसमें कुछ लिखित रूप में तर्क किए गए थे । उन्होंने उक्त पत्र में यह उल्लेख किया था कि उनके अधिवक्ता सुनवाई में हाजिर होने में समर्थ नहीं हो पाएंगे क्योंकि वह अस्वस्थ थे ।

4. इस पत्र को अभिलेख पर लेकर आयोग ने, डा0 प्रभु को या तो व्यक्तिगत तौर पर या उनकी सम्यक् रूप से प्राधिकृत काउंसेल के माध्यम से तारीख 17-9- को हाजिर होने और अपने निवेदन, यदि कोई हो, करने का एक और अवसर प्रदान किया । सूचना में यह भी स्पष्ट कर दिया गया था कि तारीख 17-9-97 को सुनवाई पर हाजिर होने में व्यतिक्रम होने पर आयोग इस विषय में उन्हें कोई और निर्देश किए बिना अपनी राय कायम करेगा और राष्ट्रपति को दे देगा । पुनः, इस तथ्य के बावजूद कि आयोग की सूचना, आयोग में वापस प्राप्त प्राप्ति स्वीकृति पत्रक के अनुसार, अधिवक्ता द्वारा सम्यक् रूप से प्राप्त कर ली गई थी, उक्त सुनवाई पर कोई हाजिर नहीं हुआ ।

5. डा0 प्रभु ने अपने लिखित कथनों में कहा था कि मुम्बई उच्च न्यायालय और उच्चतम न्यायालय द्वारा उन्हें गलत रूप से भ्रष्ट आचरण का दोषी ठहराया गया था और यह कि 1951 के अधिनियम की धारा 8क, जिसके अधीन राष्ट्रपति द्वारा आयोग को वर्तमान निर्देश किया गया है, मनमानी, स्वेच्छाचारी और संविधान के अनुच्छेद 14 का अतिक्रमणकारी होने के कारण असंवैधानिक है । लघुकारक परिस्थितियों का अभिवाक् करते हुए, डा0 प्रभु ने यह तर्क किया है कि उच्चतम न्यायालय ने, तारीख 16-5-1989 के अपने अंतरिम आदेश द्वारा, उच्चतम न्यायालय के तारीख 7-4-1989 के आक्षेपित आदेश के प्रवर्तन पर रोक आस्थान मंजूर किया था । उक्त अंतरिम आदेश, उस आदेश के पारित किए जाने से उच्चतम न्यायालय द्वारा 11-12-1995 को उनकी अपील के अन्तिम

निपटान तक प्रवर्तन में बना रहा। उच्चतम न्यायालय के अंतिम आदेश के अनुपालन में, उन्होंने विधान सभा में मत देने के अपने अधिकार का प्रयोग नहीं किया है, विधान सभा की किसी कार्यवाही में भाग नहीं लिया है और तारीख 18-5-1989 के अन्तरिम आदेश की तारीख से विधान सभा के सदस्य को देय कोई उपलब्धियां नहीं ली हैं। यद्यपि, वह 1990 में हुए साधारण निर्वाचन में उसी 38-विले पार्ले विधान सभा निर्वाचन क्षेत्र से महाराष्ट्र विधान सभा के सदस्य के रूप में पुनः निर्वाचित हो गए हैं। उन्होंने यह अभिवाक् किया कि वह पहले ही पूर्वोक्त अंतरिम आदेश द्वारा छह वर्ष और छह मास से अधिक के लिए प्रतिकूल रूप से प्रभावित रह चुके हैं जबकि 1951 के अधिनियम की धारा 8क(1) के अधीन अनुज्ञेय निरर्हता की अधिकतम अवधि छह वर्ष है। डा0 प्रभु ने यह और कहा है कि निर्वाचन अर्जी के मामले विचारण और अपील में लगभग 9 वर्ष लग गए हैं जबकि विधि किसी निर्वाचन अर्जी के निपटान के लिए छह मास का उपबंध करती है। तदनुसार उन्होंने अनुरोध किया है कि आयोग 1951 के अधिनियम की धारा 8क के अधीन उनके विरुद्ध आरंभ की गई कार्यवाही को समाप्त करने की कृपा करें।

6. आयोग ने डा0 प्रभु द्वारा किए गए उपर्युक्त निवेदनों पर सावधानीपूर्वक विचार किया है। आयोग ने यह सुस्थापित दृष्टिकोण अपनाया है कि निर्वाचन अर्जियों और निर्वाचन अपीलों में न्यायालयों के निष्कर्षों को, 1951 के अधिनियम की धारा 8क के अधीन कार्यवाहियों में आयोग के समक्ष प्रश्नगत या अभ्याक्षेपित नहीं किया जा सकता, क्योंकि वह उच्च न्यायालयों या सर्वोच्च न्यायालय के निष्कर्षों पर हुए निर्णय में आयोग के हस्तक्षेप के तुल्य होगा। आयोग निर्वाचन अर्जियों और निर्वाचन अपीलों में उच्च न्यायालयों या सर्वोच्च न्यायालय के निष्कर्षों के पुनर्विलोकन की शक्तियां धारण नहीं कर सकता है।

अत: आयोग न्यायालयों के ऐसे निष्कर्षों से उत्पन्न होने वाली 1951 के अधिनियम की धारा 8क के अधीन निरर्हता के प्रश्न पर विचार करते समय न्यायालयों के निष्कर्षों द्वारा आबद्ध है और, आयोग 1951 के अधिनियम की धारा 8क की सांविधानिक विधिमान्यता पर प्रश्न उठाने के लिए समुचित मंच नहीं है। आयोग, धारा 8क के अधिनियमित उपबंधों के अनुसार जब तक कि वे परिनियम पुस्तक पर विद्यमान हैं, कार्य करने के लिए आबद्ध है जैसा कि उच्चतम न्यायालय द्वारा, ए0आई0आर0 1984 एस0सी0 921 में रिपोर्ट किए गए ए0सी0 जोस बनाम शिवन पिल्लै के मामले में अभिनिर्धारित किया गया है।

7. उच्चतम न्यायालय के अंतरिम आदेश के प्रतिकूल प्रभाव के संबंध में डा0 प्रभु का यह निवेदन विधि के अधीन स्वीकार नहीं किया जा सकता कि वह पुन: 1990 में हुए साधारण निर्वाचन में उसी विधान सभा निर्वाचन क्षेत्र से निर्वाचित हुए थे तब विधान सभा के सदस्य को उपलभ्य फायदों से वंचित रहे हैं। डा0 प्रभु ने, उनके द्वारा फाइल की गई अपील में उच्चतम न्यायालय के तारीख 18-5-1990 के अंतरिम आदेश का पूरा फायदा उठाया है। वह उच्चतम न्यायालय द्वारा मंजूर किए गए उक्त स्थगन आदेश के कारण ही, उसी निर्वाचन क्षेत्र से 1990 में पश्चात्वर्ती निर्वाचन में लड़ सके थे और विधान सभा के सदस्य के रूप में निर्वाचित हुए थे। ऐसा केवल उस अंतरिम आदेश के फलस्वरूप ही हुआ था कि उन्हें न केवल विधान सभा में अपना स्थान खोना पड़ा अपितु दूसरी ओर वह उसके लगभग छह वर्ष तक सदस्य भी बने रहे। यदि विधान सभा की उनकी सदस्यता के संबंध में अंतरिम आदेश का एक मात्र कोई प्रतिकूल प्रभाव था भी तो वह उनके गलत कार्यों का परिणाम

था और उसे पर्याप्त और उचित दंड नहीं माना जा सकता है ।

8. जहां तक डा0 प्रभु के इस निवेदन का संबंध है कि न्यायालयों द्वारा उनके मामले का विनिश्चय करने में लगभग 9 वर्ष लगे हैं, आयोग को कुछ नहीं कहना है क्योंकि यह विषय आयोग के कार्यक्षेत्र से परे है । आयोग, न्यायालयों के निष्कर्षों के पश्च विनिश्चयकारी प्रभावों से ही संबद्ध है । आयोग के समक्ष विचार के लिए प्रश्न यह है कि क्या मामले के तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए डा0 प्रभु को निरर्हित किया जाए और यदि किया जाए तो कितनी अवधि के लिए ।

9. यह मान्य तथ्य है कि किसी अपराध के लिए अधिरोपित दंड उस अपराध की गंभीरता का सामनुपातिक होना चाहिए । इसे न तो अत्यधिक कठोर और इतना अननुपाती होना चाहिए कि यह मनमाना दिखाई पड़े और न ही इतना कम होना चाहिए कि दंड का अधिरोपण, कानूनी उपबंधों में अन्तर्निहित उद्देश्य को ही समाप्त या विनष्ट कर दे ।

10. न्यायालय भ्रष्ट आचरण के आरोप के संबंध में सबूत के अत्यधिक कठोर मानदंड अपनाते हैं और साबित हो जाने पर भ्रष्ट आचरण के लिए जाने के गंभीर परिणामों को, अर्थात् निर्वाचन को शून्य के रूप में घोषणा करने और छह वर्ष की अवधि के लिए निरर्हता घोषित करने, जैसा कि 1951 के अधिनियम की धारा 8क (1) के अधीन परिकल्पित है, पूरी तरह महसूस करते हुए संदेह से पूर्णतः परे आरोप साबित किए जाने पर जोर देते हैं । मुम्बई उच्च न्यायालय ने सुनिश्चित रूप से डा0 प्रभु को 1951 के अधिनियम की धारा 123(3) और धारा 123(3क) के अधीन भ्रष्ट आचरण का दोषी अभिनिर्धारित किया है और उच्चतम न्यायालय ने भी स्पष्टतः और सुस्पष्ट

रूप से उच्च न्यायालय के निष्कर्षों को बनाए रखा है और उच्च न्यायालय के निष्कर्षों में हस्तक्षेप करने का कोई कारण नहीं देखा है ।

11 पूर्वोक्त सुनिश्चित निष्कर्षों को ध्यान में रखते हुए, डा० प्रभु के विरुद्ध उक्त अधिनियम की धारा 123(3) के अधीन धर्म के आधार पर मत देने की अपील और धारा 123(क) के अधीन धर्म आदि के आधार पर नागरिकों के विभिन्न वर्गों के बीच शत्रुता या घृणा की भावनाओं का संवर्धन करने या संवर्धन का प्रयत्न करने के साबित भ्रष्ट आचरण के आरोप बहुत ही गंभीर और गुरुतर प्रकृति के हैं । इस पर दो राय नहीं हो सकती कि ऐसे घातक आचरण, जो अत्यधिक खतरनाक हैं और जो लोकतंत्र के बने रहने को भी धमकी दे सकते हैं , अत्यधिक चिंता के साथ देखे जाने चाहिए और बिना किसी उदारता के कठोर रूप से समाप्त किए जाने चाहिए । ऐसे जघन्य आचरण में लगे व्यक्तियों को विधि के अधीन अनुज्ञेय कठोरतम शास्ति दी जानी चाहिए, क्योंकि उनको दिखलाई जाने वाली किसी उदारता का अर्थ ऐसे भ्रष्ट आचरण करने वालों के साथ समझौता करना होगा जो निर्वाचनों की पवित्रता को कलंकित करते हैं ।

12. मामले के तथ्यों और परिस्थितियों की समग्रता को और डा०प्रभु के विरुद्ध साबित भ्रष्ट आचरण की गुरुतर प्रकृति को ध्यान में रखते हुए, वह किसी उदारता के पात्र नहीं हैं । उन्हें निरर्हित किया जाना चाहिए और विधि, अर्थात् 1951 के अधिनियम की धारा 8क(1) के अधीन अनुज्ञेय अधिकतम शास्ति दी जानी चाहिए ।

13. तदनुसार, आयोग यह विनिश्चय करता है और 1951 के अधिनियम की धारा 8क(3) के अधीन राष्ट्रपति को अपनी यह राय देता है कि

डा० रमेश यशवंत प्रभु को, लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 की धारा 8क(1) के अधीन, उच्चतम न्यायालय के आदेश की तारीख, अर्थात् 11-12-1995 से छह वर्ष की अवधि के लिए निरर्हित किया जाना चाहिए ।

14. राष्ट्रपति से प्राप्त निदेश को, आयोग की उपर्युक्त आशय की राय के साथ उन्हें लौटाया जाता है ।

ह./-
(जी. वी. जी. कृष्णामूर्ति)
निर्वाचन आयुक्त
नई दिल्ली,
तारीख 15 अक्तूबर, 1997

ह./-
(जे. एम. लिंगडोह)
निर्वाचन आयुक्त

[फा. सं. 7/39/97-विधा. II]
सुषमा जैन, संयुक्त सचिव

MINISTRY OF LAW AND JUSTICE
(Legislative Department)
NOTIFICATION

New Delhi, the 9th January, 1998

S.O. 31(E).—The following Order made by the President is published for general information :—

ORDER

Whereas the election of Dr. Ramesh Yashwant Prabhoo (hereinafter referred to as the 'returned candidate') from 38-Vile Parle Maharashtra Legislative Assembly Constituency in the bye-election held in December, 1987 was set aside by the High Court of Bombay on 7.4.1989 on the ground of commission by the returned candidate of corrupt practices specified in clauses (3) and (3A) of section 123 of the Representation of the People Act, 1951 (hereinafter referred to as "the said Act");

And whereas an appeal was filed by the returned candidate before the Supreme Court and that Court by an interim order dated 18.5.1989 stayed the operation of Bombay High Court's order dated 7.4.1989;

And whereas the Supreme Court dismissed the appeal on 11th December, 1995;

And whereas the opinion of the Election Commission has been sought in pursuance of sub-section (3) of section 8A of the said Act, on the question whether the returned candidate should be disqualified under sub-section (1) of that section and if so, for what period;

And whereas the Election Commission has given its opinion (vide Annex) that the returned candidate should be disqualified for having committed the corrupt practice mentioned above, for a period of six years to be reckoned from 11th December, 1995 i.e. the date of the order of the Supreme Court;

Now, therefore, I, K.R. Narayanan, President of India, in exercise of the powers conferred on me under sub-section (3) of section 8A of the said Act, do hereby decide that the returned candidate should be disqualified for a period of six years from 11th December, 1995.

8th January, 1998.

PRESIDENT OF INDIA

भारत निर्वाचन आयोग
ELECTION COMMISSION
OF INDIA

CORAM :

Hon'ble Shri G.V.G.Krishnamurty
Election Commissioner

Hon'ble Shri J.M.Lyngdoh
Election Commissioner

Reference Case No. 1 (RPA) of 1997

{Reference from the President of India under Section 8A of the Representation of the People Act, 1951}

In re: Disqualification of Dr. Ramesh Yashwant Prabhoo, Ex-MLA of Maharashtra Legislative Assembly.

OPINION

In this reference from the President of India under sub-section (3) of Section 8A of the Representation of the People Act, 1951 (hereinafter referred to as '1951-Act') opinion of the Election Commission has been sought on the question whether Dr. Ramesh Yashwant Prabhoo, a former Member of the Legislative Assembly of Maharastra, should be disqualified and, if so, for what period under section 8A (1) of the said Act.

2. The relevant facts, in brief, are as follows:-

(i) Dr. Ramesh Yashwant Prabhoo was elected to the Maharashtra Legislative Assembly from 38-Vile Parle Assembly Constituency in the bye-election held in December, 1987. His election was

called in question by Shri Prabhakar Kashinath Kunte, one of the contesting candidates, before the High Court of Bombay in Election Petition No. 1 of 1988.

(ii) The Bombay High Court, by its judgment and order dated 7.4.89, declared the election of Dr. Ramesh Yashwant Prabhoo as void on the ground of commission of corrupt practices under sections 123 (3) and 123 (3A) of the 1951-Act. The Court held that Shri Prabhoo had committed the corrupt practices of –

(a) making appeal, through his agent and with his consent, to the voters to vote in his favour on the ground of his religion;

(b) promotion or attempt to promote feelings of enmity and hatred between different classes of the citizens of India on the ground of religion and community.

(iii) Shri Prabhoo filed an appeal [Civil Appeal No. 2836 of 1997] before the Supreme Court of India against the aforesaid order of the Bombay High Court declaring his election as void. By its order dated 18.5.1989, the Supreme Court of India stayed the operation of the High Court's judgment and also further proceedings under Section 8A of the 1951-Act.

(iv) By its final order dated the 11th December, 1995, the Supreme Court has dismissed the appeal of Shri Prabhoo and has upheld the decision of the Bombay High Court declaring the election of Shri Prabhoo as void. The Supreme Court has agreed with the findings

of the High Court that the charge of corrupt practices under sections 123 (3) and 123 (3A) of the 1951-Act of, appealing to the voters on the ground of religion and promotion of enmity and hatred beteween different classes of electors on ground of religion, has been established.

(v) Thus, by the said judgement dated 11-12-1995 of the Supreme Court Shri Prabhoo has been found guilty of corrupt practices under Sections 123(3) and 123(A) of the 1951-Act. On the case of Shri Prabhoo being referred on 14-1-1997 by the Secretary, Maharashtra Legislative Assembly to the President, in terms of Section 8A(1) of the 1951-Act, the matter has been referred to the Election Commission for its opinion under Section 8A(3) of the said Act.

3. Before formulating and tendering its opinion, the Commission decided to afford Dr. Ramesh Yashwant Prabhoo an opportunity of being heard. Dr. Prabhoo could not attend the hearing fixed by the Commission on 4-4-1997, because of by-pass operation, but filed his written statement on 15th March, 1997. A supplementary written statement was also filed by Shri Prabhoo, through his advocate Shri A.B. Bhandari, on 29.05.1997. On receipt of the aforesaid supplementary written statement, the Commission decided to afford Dr. Probhoo another opportunity of being heard. He was accordingly directed by message and formal notice dated 24.6.1997 to appear either personally or through his authorised counsel on 31.7.1997 and make his submissions in the matter. In the said notice dated 24.6.97 the Commission specifically made it clear to Dr. Prabhoo and his Advocate that in default of appearance on 31.7.1997 the matter

would be decided without any further reference to them. None appeared at the said hearing on 31.7.1997, despite the fact that the Commission's notice mentioned above was duly received by them as per acknowledgements received back in the Commission

However, on the 29th July, 1997, the Commission had received from Shri Prabho a copy of the communication addressed by him to the Secretary to the President of India wherein some written arguments were made. He had mentioned in the said communication that his advocate would not be able to attend the hearing as he was unwell.

4. Taking this communication on record, the Commission afforded yet another opportunity to Dr. Prabhoo to appear, either in person or through his duly authorised counsel, on 17-9-1997 and make his submissions, if any. It was also made clear in the notice that in default of appearance at the hearing on 17-9-97, the Commission would formulate and tender its opinion to the President without any further reference to him in the matter. Again none appeared on the said hearing, despite the fact that the Commission's notice was duly received by the Advocate as per acknowledgement card received back in the Commission.

5. In his written statements, Dr. Prabhoo stated that he had been wrongly held to be guilty of corrupt practices by the Bombay High Court and the Supreme Court and that section 8A of the 1951-Act, under which the present reference has been made by the President to the Commission, is unconstitutional being arbitarary, capricious and violative of Article 14 of the Constitution. Pleading extenuating circumstances, Dr. Prabhoo has argued that the Supreme Court, by an interim order dated 18.5.1989, granted a conditional stay of operation of the High Court's impugned order dated 7.4.1989 . The said interim order remained in operation, since the passing of that order and till the final

disposal of his appeal on 11.12.1995 by the Supreme Court. In deference to the interim order of the Supreme Court, he has not excercised his right to vote in the Assembly, has not participated in any proceedings of the Assembly and has not drawn any emoluments payable to a member of the Assembly from the date of the interim order dated 18.5.1989, though he was again elected as a member of the Maharashtra Legislative Assembly from the same 38-Vile Parle Assembly Constituency at the general election held in 1990. He pleaded that he had already been adversely affected by the aforesaid interim order for over six years and six months whereas the maximum period of disqualification permissible under section 8A(1) of the '1951-Act' is six years. Dr. Prabhoo has further stated that the trial and appeal in respect of the election petition took nearly nine years, whereas the law provides six months for disposal of any election petition. He has, accordingly, prayed that the Commission might be pleased to drop the proceedings initiated against him under section 8A of the '1951-Act'.

6. The Commission has carefully considered the above submissions made by Dr Prabhoo The Commission has consistently taken the view that the findings of the Courts in Election Petitions and Election Appeals cannot be questioned or assailed before the Commission in the proceedings under section 8A of the '1951-Act', as that would tantamount to the Commission sitting in judgment over the findings of the High Courts or the Apex Court. The Commission cannot assume the powers of review of the findings of the High Courts on of the Apex Court in Election Petitions and Election Appeals The Commission is, therefore, bound by the findings of the Courts while considering the question of disqualification under Section 8A of the '1951-Act' arising out of such findings of the Courts. Further, the Commission is not the appropriate forum for questioning the Constitutional validity of section 8A of the '1951-Act' The Commission

is bound to act in accordance with the enacted provisions of section 8A,so long as it exists on the statute book, as has been held by the Supreme Court in the case of A.C. Jose Vs. Sivan Pillai reported in AIR 1984 SC 921.

7. As regards the adverse effect of the interim order of the Supreme Court, the submissions of Dr. Prabhoo that he has been deprived of the benefits available to the member of the Assembly when he was again elected from the same Assembly Constituency at the General Election held in 1990 cannot be accepted under the law Dr Prabhoo took full advantage of the interim order dated 18.5.1989 of the Supreme Court in the appeal filed by him. He could contest the subsequent election in 1990 from the same constituency, only because of the said stay order granted by the Supreme Court, and got elected as member of the Assembly. It was only by virtue of that interim order that not only he did not lose his seat in the Assembly, but on the other hand, continued to be a member thereof for nearly six years. If there was only adverse effect at all of the interim order in relation to his membership of the Assembly, that was the consequence of his wrong doing and that cannot be considered to be sufficient and adequate punishment

8. In so far as the submission of Dr. Prabhoo that it took nearly nine years for his case to be decided by the Courts is concerned, the Commission has nothing to say, as it is a matter beyond the preview of the Commission. The Commission is concerned only with the post-decisional effects of the findings of the Courts. The question for consideration before the Commission is whether Dr. Prabhoo should be disqualified and, if so, for what period, having regard to the facts and circumstances of the case.

9. It is an admitted fact that the punishment imposed for the offence should be proportionate to the gravity of the offence. It should neither be excessively harsh and so disproportionate that it may look arbitrary, nor should it be so minimal that the imposition

of the punishment may defeat or frustrate the very object underlying the statutory provisions.

10. The Courts adopt very strict standards of proof in relation to a charge of corrupt practice and insist upon the charge being proved beyond any shadow of doubt, realising fully well the serious consequences of the commission of corrupt practice when proved, i.e., declaration of the election as void and the disqualification for a period upto 6 years as envisaged under section 8A(1) of the '1951-Act'. The Bombay High Court has categorically held Dr. Prabhoo guilty of corrupt practice under sections 123(3) and 123(3A) of the '1951-Act' and the Supreme Court has also clearly and unambiguously upheld the findings of the High Court and has seen no reason to interfere with the findings of the High Court.

11. In view of the aforesaid categorical findings, the charge of corrupt practices proved against Dr Prabhoo, under section 123(3) of appeal to vote on the ground of religion, and under section 123(3A) of promoting or attempting to promote feelings of enmity or hatred between different classes of citizens on the grounds of religion, etc., of the said Act, are of very serious and grave nature. There cannot be two opinions that such pernicious practices which are highly dangerous and can threaten the very survival of democracy must be viewed with utmost concern and put down with a heavy hand without any leniency. Persons indulging in such nefarious practices must be visited with the severest penalty permissible under the law, as any leniency shown to them would mean compromising with those corrupt practices which sully the purity of elections.

12. Having regard to the totality of the facts and circumstances of the case and the serious and grave nature of corrupt practices proved against Dr Prabhoo, he deserves

no leniency. He should be disqualified and should be visited with the maximum penalty permissible under the law, viz., Section 8A(1) of the '1951-Act'.

13. Accordingly, the Commission hereby decides, and tenders its opinion to the President under Section 8A(3) of the '1951-Act', that Dr. Ramesh Yeshwant Prabhoo should be disqualified under Section 8A(1) of the Representation of the People Act, 1951, for a period of six years from the date of the Supreme Court's Order, viz., 11.12.1995.

14. The reference received from the President is returned with the Commission's opinion to the above effect.

Sd/-
(G. V. G. KRISHNAMURTY)
ELECTION COMMISSIONER

Sd/-
(J. M. LYNGDOH)
ELECTION COMMISSIONER

New Delhi.
Dated, 15th October, 1997.

[F. No. 7(39)/97-Leg. II]

SUSHMA JAIN, Jt. Secy.

Printed by the Manager, Govt. of India Press, Ring Road, Mayapuri, New Delhi-110064
and Published by the Controller of Publications, Delhi-110054 — 1998